इकाई 7 सामाजिक और सांस्कृतिक फीचर लेखनः विषय का चयन और प्रस्तुति

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 सामाजिक फीचर से तात्पर्य

7.3 सामाजिक फीचर के लिए विषय का चयन

- 7.3.1 सामाजिक परंपराओं से संबंधित
- 7.3.2 सामाजिक समस्याओं से संबंधित
- 7.3.3 महिलाओं, बच्चों, बुजुर्गों की समस्याओं से संबंधित
- 7.3.4 सांप्रदायिक सौहार्द से संबंधित
- 7.3.5 सामाजिक विकास के लिए चल रहे प्रयासों से संबंधित

7.4 सामाजिक फीचर का उद्देश्य

7.5 सामाजिक फीचर की प्रस्तुति और भाषा–शैली

7.6 सांस्कृतिक फीचर से तात्पर्य

7.7 सांस्कृतिक फीचर के लिए विषय चयन

- 7.7.1 संगीत
- 7.7.2 नृत्य
- 7.7.3 अभिनय
- 7.7.4 चित्रकला
- 7.7.5 साहित्य
- 7.7.6 फैशन और रहन–सहन

7.8 सांस्कृतिक फीचर के उद्देश्य

7.9 सांस्कृतिक फीचर की प्रस्तुति और भाषा–शैली

7.10 सारांश

7.11 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

यह इस पाठ्यक्रम की सातवीं इकाई है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- सामाजिक और सांस्कृतिक फीचर का आशय स्पष्ट कर सकेंगी/सकेंगे;
- सामाजिक फीचर लेखन के उद्देश्यों को रेखांकित कर सकेंगी/सकेंगे;
- सामाजिक और सांस्कृतिक फीचर के प्रकार बता सकेंगी/सकेंगे;

- सामाजिक और सांस्कृतिक फीचर के लिए विषय के चुनाव और प्रस्तुति का तरीका सीख सकेंगी/सकेंगे;
- सामाजिक और सांस्कृतिक फीचर लेखन संबंधी आवश्यक सामग्री का संकलन और उसके स्रोतों का पता लगा सकेंगी/सकेंगे;
- सामाजिक और सांस्कृतिक फीचर लेखन में भाषा संबंधी सावधानियां बरत सकेंगी/सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

जैसे–जैसे संचार माध्यमों का विस्तार हुआ है, लोगों में सामाजिक, सांस्कृतिक मुद्दों और मानवीय अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है। लोग समझने लगे हैं कि सामाजिक सांस्कृतिक विकास के प्रति सरकार और विभिन्न संस्थानों के क्या कर्त्तव्य हैं। यही वजह है कि जिन मसलों पर सरकार ध्यान नहीं दे पाती, उन पर लोग उसका ध्यान आकर्षित करते हैं। आपने देखा होगा कि अखबारों–पत्रिकाओं में पत्र लिखकर और टेलीविजन चैनलों के माध्यम से अपने जन प्रतिनिधियों से सीधे सवाल पूछ कर लोग बिजली, पानी, सड़क, स्वास्थ्य, शिक्षा, साफ–सफाई, महिलाओं, बच्चों आदि की समस्याओं से संबंधित मसलों पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। पत्र–पत्रिकाएं और टेलीविजन चैनल इन मुद्दों पर फीचर और समाचार तो प्रकाशित–प्रसारित करते रहते हैं ताकि लोगों में जागरूकता पैदा हो साथ ही वे लोगों को इस बात के लिए भी प्रोत्साहित करते हैं कि वे अपनी समस्याओं के बारे में उन्हें बताएं और उन पर सवाल उठाने में सहभागिता निभाएं।

इस तरह संचार माध्यम और आम लोग एक दूसरे के साथ जुड़ रहे हैं। ऐसे में सामाजिक मसलों पर फीचर लेखन का क्षेत्र भी काफी व्यापक हुआ है। समाज का शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र है जो मीडिया की नजर से बचा हो। चाहे वह बाल विवाह का मसला हो, दहेज की समस्या हो, झाड़–फूंक, टोने–टोटके के जरिए तांत्रिकों –बाबाओं की धोखाधड़ी या चुड़ैल या सती घोषित करके महिलाओं को मार डालने की घटना हो, पंचायतों द्वारा अव्यावहारिक और रूढ़िवादी फैसले थोपने का मामला हो, सरकार की लापरवाही के कारण संक्रामक रोगों के फैलने, स्कूलों की बदहाली, महिलाओं–बच्चों के लिए चलाई जा रही योजनाओं के कारगर न हो पाने का मसला हो, अखबार और पत्रिकाएं तो सवाल खड़े करती ही हैं, लोग भी इन पर अपने विचार खुल कर प्रकट करते हैं।

इसी तरह, ऐतिहासिक धरोहरों की उपेक्षा, लोक संस्कृति की परंपराओं के लुप्त होते जाने, मंचीय कलाओं, कलाकारों–लेखकों को समुचित आदर–प्रोत्साहन न मिल पाने आदि पर मीडिया और सामान्य लोग अपने विचार प्रकट करते रहते हैं। अगर कोई लोक परंपरा– संगीत, वाद्य, नृत्य, गायन, अभिनय, चित्रकारी, दस्तकारी आदि लुप्त हो रही है और उसे बचाने का प्रयास किया जा रहा है तो उसकी सराहना करनी चाहिए और अगर ऐसा नहीं हो रहा है तो उसकी तरफ ध्यान देने की जरूरत आदि मसलों पर अक्सर लेख, समाचार, फीचर आदि का प्रकाशन होता रहता है। इस तरह पत्रकारिता में सामाजिक सांस्कृतिक विषयों का काफी विस्तार हुआ है। उन पर फीचर लिखना अन्य विषयों की अपेक्षा सरल भी माना जाता है। इन विषयों में अधिकांश लोगों की रुचि होती है । इसलिए इनके प्रकाशन पर भी अधिक बल दिया जाता है।

इस इकाई में हम सामाजिक–सांस्कृतिक विषयों पर फीचर लेखन के विभिन्न पक्षों के बारे में विस्तार से जानकारी हासिल करेंगे।

7.2 सामाजिक फीचर से तात्पर्य

समाज में रहने वाले व्यक्तियों, समुदाय, जाति या वर्गों से संबंधित समस्याओं पर लिखा गया कोई भी फीचर सामाजिक फीचर कहलाएगा। मगर पिछले कुछ समय से समाज में तेजी से हो रहे बदलावों के कारण पत्रकारिता जगत में प्रकाशन–प्रसारण की सुविधा के लिहाज से विषयों को अलग–अलग क्षेत्रों में विभाजित कर लिया गया है। जैसे खेल, आर्थिक मुद्दे, वैज्ञानिक उपलब्धियां, रहन–सहन फैशन आदि। फिर भी समाज का काफी बड़ा क्षेत्र और उससे जुड़ी समस्याएं सामाजिक फीचर की दृष्टि से मौजूद हैं।

तमाम वैज्ञानिक उपलब्धियों, आर्थिक और शैक्षिक विकास के चलते हमने भले ही काफी तरक्की कर ली हो, हमारा जीवन पहले से काफी सुविधा–संपन्न हो चुका हो, दुनिया की सूचनाएं आसानी से प्राप्त हो जाती हों, दूसरे देशों की जीवन शैली अपनाने के मामले में हम उदार साबित हो रहे हों, लेकिन हमारे विशाल समाज का काफी बड़ा तबका अब भी अनेक प्रकार की रूढ़ियों–अंधविश्वासों और सामंती परंपराओं से जकड़ा हुआ है। छुआछूत, सांप्रदायिक वैमनस्यता किसी न किसी रूप में बनी हुई है। हमारे देश की करीब आधी आबादी ठीक से पढ़ना–लिखना नहीं जानती। आर्थिक रूप से कमजोर तबके के अनेक बच्चों को स्कूल जाने की बजाय पेट भरने के लिए बाल मजदूरी या बंधुआ मजदूरी करनी पड़ती है। कई समाजों में गरीबी के कारण अपने बच्चे बेचने की घटनाएं भी सामने आ चुकी हैं।

हालांकि सरकार ने गरीब और अभावों में जी रहे लोगों के लिए रोजगार और जीवन व्यापन योजनाएं लागू की हैं, लेकिन प्रशासन की लापरवाही या अनदेखी के कारण वे सफल नहीं हो पा रही हैं। लड़कियों की शिक्षा और उनके स्वास्थ्य के मामले में पढ़े लिखे समाज में भी पुराना नजरिया मौजूद है। बाल विवाह, दहेज, तलाक, बलात्कार चारित्रिक लांछन और महत्ता उत्पीड़न के मामले अक्सर उजागर होते रहते हैं। दूरदराज के गांवों में सड़क, बिजली, स्वास्थ्य, शिक्षा जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव होने के कारण महिलाओं को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

लेकिन तमाम परेशानियों, असुविधाओं, सामंती परंपराओं के बावजूद देश के विभिन्न हिस्सों में लोगों ने पारंपरिक स्रोतों को पुनर्जीवित कर न सिर्फ रोजगार के नए अवसर तलाशे हैं, बल्कि दूसरों के लिए मिसाल भी कायम की है। हालांकि अब भी देश के कई पिछड़े इलाकों में जातीय पंचायतें रूढ़ियों में जकड़ी होने के कारण गैरकानूनी और असंवैधानिक फैसले करती देखी जाती हैं, मगर अनेक निर्वाचित पंचायतों ने लोगों को एकजुट कर नारी सशक्तीकरण, शिक्षा, गरीबी उन्मूलन, बाल–विवाह और दहेज रोकने, फिजूलखर्ची पर पाबंदी लगाने, सड़क, बिजली, पानी जैसी बुनियादी सुविधाएं जुटाने में सराहनीय काम किए हैं। कई इलाकों में लोगों ने बिना किसी सरकारी मदद के, आपसी सहयोग से वर्षों से सूख चुकी बावड़ियों, कुओं, तालाबों आदि को पुनर्जीवित कर अपने लिए पीने और सिंचाई के पानी का बंदोबस्त किया है और पेड़–पौधों, वन्य और जलीय जीवों की लुप्त होती प्रजातियों को बचाया है।

कई पंचायतों ने आपसी सहमति से विवाह में दहेज और फिजूलखर्ची पर रोक लगाई है। महिलाओं ने आगे बढ़कर नशामुक्ति को पूरी तरह सफल बनया है। अनेक पंचायतों ने गांवों में महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के कार्यक्रम चलाए हैं। गांवों में बिजलीकरण और स्वच्छता अभियान चलाकर आदर्श गांव बनाया है। अंधविश्वास के खिलाफ जनजागरूकता अभियान चलाया है। इसके अलावा सरकारी और गैर सरकारी संगठनों ने ग्रामीण और आदिवासी इलाकों में अनेक विकास कार्यक्रम चलाये हैं, लोगों में समाज के प्रति जिम्मेदारी की भावना विकसित की है और वर्षों से उपेक्षित पड़ी जातियों को समाज में सम्मान दिलाया है।

समाज की ऐसी अनेक समस्याओं और सामाजिक विकास, पिछड़े–दलित लोगों के उत्थान के लिए चल रहे प्रयासों को लेकर सार्थक फीचर लिखे जा सकते हैं।

7.3 सामाजिक फीचर के लिए विषय का चयन

हम पीछे चर्चा कर आए हैं, कि विभिन्न पहलुओं को ध्यान में रखते हुए सामाजिक फीचर के लिए निम्नलिखित क्षेत्रों से संबंधित विषय चुने जा सकते हैं।

- सामाजिक परंपराएं
- बुनियादी समस्याएं
- महिलाओं, बच्चों, बुजुर्गों की समस्याएं
- सांप्रदायिक सौहार्द
- सामाजिक विकास के लिए चल रहे प्रयास

7.3.1 सामाजिक परंपराओं से संबंधित

हमारे समाज में अनेक जाति, वर्ग, समुदाय के लोग रहते हैं। हर प्रांत की अपनी भाषा संस्कृति और रीति–रिवाज हैं। त्योहार और सामाजिक उत्सव मनाने के तरीके हैं। अगर आप दशहरे और रामलीला का उदाहरण लें तो उत्तर और दक्षिण भारत में इसे मनाने के तरीकों में साफ अंतर नजर आएगा। इसी तरह, पहाड़ी और आदिवासी समाजों में इसे अलग तरीके से मनाया जाता है। अलग–अलग इलाकों में शादी–विवाह की अलग–अलग परंपराएं हैं। यहां तक कि मेहमानों के स्वागत के तरीके भी अलग हैं। हर समाज और समुदाय के अपने देवी–देवता और पूजा पद्धतियां हैं। ऋतुओं और सामाजिक जीवन से संबंधित मान्यताएं और पर्व हैं।

कृषि–प्रधान समाज में फसलों, ऋतुओं आदि को लेकर अनेक परंपराएं प्रचलित हैं। दरअसल कृषि संस्कृति में उत्सवों, त्योहारों, व्रतों आदि की काफी समृद्ध परंपरा है। फसल बोने से लेकर काटने और मंड़ाई करने तक कई तरह के उत्सव और त्योहार प्रचलित हैं। इसी तरह आदिवासी समाज में भी काफी उत्सव मनाए जाते हैं। हर समाज के अलग–अलग उत्सव हैं, यहां तक कि महिलाओं के अपने अलग उत्सव हैं। हमारे समाज में ज्यादातर उत्सवों में महिलाओं की सक्रिय भूमिका होती है। अनेक ऐसे उत्सव हैं जिनमें पुरुषों की भागीदारी नहीं होती, उन्हें सिर्फ महिलाएं आयोजित करती और आनंद लेती हैं। यह अलग बात है कि उन उत्सवों–व्रतों का केंद्र ज्यादातर उनके पति और बच्चे होते हैं। सामाजिक परंपराओं पर फीचर लिखते समय उन समाजों का गहराई से अध्ययन जरूरी है, जिन पर आप लिखने जा रहे हैं। इसके लिए वहां के लोगों के बीच रहना और उनकी दिनचर्या एवं बाकी जीवन शैली का अध्ययन करना

पड़ सकता है। उन समाजों में रहने वाले लोगों से बातचीत भी जरूरी है। यह ऐसा फीचर है जिस पर लिखने के लिए सिर्फ पुस्तकों या दूसरे स्रोतों से तथ्य या जानकारी प्राप्त कर लिखना भर काफी नहीं होता। ऐसे फीचर में आत्मीयता और अनुभव का पुट फीचर को प्रामाणिक बनाता है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाएगी–

''किसी अभिशाप की तरह छत्तीसगढ़ की मजलूम विधवाओं और परिवारों में एकाकीपन की शिकार हुई महिलाओं को एक कुचक्र के चलते टोनही घोषित कर देने की सदियों से चली आ रही प्रथा पर अब अंकुश लग जाने की उम्मीद की जा रही है।...अमूमन हर हफ्ते–पखवाड़े किसी न किसी गांव में किसी विद्रोही, वाचाल, अर्ध–विक्षिप्त अथवा गांव के मठाधीशों से हर मोर्चे पर लोहा लेने वाली दबंग किंतु टोनही कहे जाने पर प्रताड़ना और लांछन के चलते खंडित व्यक्तित्व जैसे मनोरोगों की चपेट में आ चुकी महिलाओं के साथ ज्यादती की घटनाएं उजागर होती रही हैं।''

(टोनही अब नहीं– रमेश शर्मा, सहारा समय– 30 जुलाई 2005)

7.3.2 सामाजिक समस्याओं से संबंधित

माना जाता है कि गांवों की अपेक्षा शहरों में अधिक सुविधाएं उपलब्ध होती हैं। यह धारणा काफी हद तक सही है, लेकिन शहरों में भी काफी बड़ा समुदाय ऐसा है जो अभावों में जीता है। उसे हर रोज पेट पालने के लिए तरह–तरह से संघर्ष करना पड़ता है। जिन शहरों में कल–कारखाने और रोजगार के अवसर अधिक हैं वहां ऐसे लोगों की संख्या अधिक पाई जाती है। जिन शहरों में इस तरह के अवसर कम हैं वहां नौकरी–पेशा, व्यवसाय या दूसरे कारोबार में लगे लोगों की संख्या अधिक होती है। ग्रामीण क्षेत्रों में खेती से गुजारा न हो पाने या रोजगार के नए अवसर उपलब्ध न हो पाने के कारण पढ़े–लिखे युवकों के अलावा कम पढ़े या अनपढ़ लोगों का भी पलायन महानगरों की तरफ तेजी से बढ़ा है। इस तरह महानगरों में जनसंख्या का तेजी से विस्फोट हुआ है जिससे बुनियादी सुविधाएं जुटा पाना सरकार के लिए चुनौती बन गई है।

सभी के लिए रोजगार के अवसर उपलब्ध न हो पाने के कारण महानगरों में भी अनेक लोग कचरा बीनने, दिहाड़ी मजदूरी करने, सड़कों के किनारे ठेले–खोमचे लगाने, घरों में झाड़ू–बर्तन–पोंछा का काम करने या घरेलू नौकर के रूप में आजीविका चलाने का काम करते हैं। आवास की सुविधा उपलब्ध न होने के कारण ये नालों के किनारे गंदी बस्तियों में रहते हैं। न उन्हें पीने का साफ पानी मिल पाता है और न ही वे अच्छा भोजन कर पाते हैं। ऐसी दिनचर्या और रहन–सहन से अक्सर वे गंभीर बीमारियों की चपेट में आ जाते हैं।

गांवों में हालांकि शहरों की तरह भीड़भाड़ और वाहनों की भागदौड़ अधिक न होने के कारण प्रायः हवा स्वच्छ होती है, कचरे और गंदे नालों के किनारे बस्तियां न होने के कारण शहरों जैसी बीमारियों के खतरे कम होते हैं, लेकिन गांवों के लोग अक्सर भू जल पर आश्रित होते हैं और पिछले कुछ सालों से जमीन के अंदर का जल लगातार प्रदूषित होता गया है। इसलिए जल–जनित बीमारियों के खतरे बने रहते हैं। इसके अलावा शहरों की अपेक्षा गांवों में रोजगार के अवसर कम होने के कारण साधनहीन परिवारों को भूखे रहने और उनके बच्चों में कुपोषण से समस्याएं पैदा होती हैं। हालांकि पहले का ग्रामीण समाज एक–दूसरे को सहयोग करने के लिए जाना जाता

था पर अब वहां भी जातीय और सांप्रदायिक वैमनस्य पैदा हो जाने के कारण सहयोग की भावना कम हो गई है। इससे गरीब परिवारों पर बुरा असर पड़ा है।

इसके अलावा ग्रामीण इलाकों में लोग प्रायः खेती पर आश्रित हैं। मगर सिंचाई के साधन, बिजली की सुविधा और खाद–बीज आदि के लिए समुचित सरकारी सहयोग न मिल पाने के कारण अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। दूर–दूर तक कई गावों के बीच एक स्कूल और अस्पताल बना हुआ है। शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी जनजागरूकता अभियान ठीक से नहीं चलाए जाते अक्सर बच्चे प्राथमिक शिक्षा के बाद स्कूल छोड़ देते हैं। सामान्य बीमारियों की स्थिति में भी लोगों को या तो शहर कस्बे के स्वास्थ्य केंद्रों पर जाना पड़ता है या पारंपरिक चिकित्सा, झाड़–फूंक, टोने–टोटके का सहारा लेना पड़ता है। अब भी अनेक गांव मुख्य सड़क से नहीं जुड़ पाए। जिससे वहां आवागमन के साधन उपलब्ध नहीं हैं। लोगों को काफी दूर तक पैदल चल कर बस या रेलगाड़ी पकड़नी पड़ती है। ऐसे में अनेक बच्चे दूरदराज के स्कूलों में शिक्षा के लिए जाने से हिचकते हैं। गंभीर बीमारी की दशा में अस्पताल पहुंचने से पहले ही रोगी दम तोड़ देते हैं।

हालांकि केंद्र और राज्य सरकारें गांवों के विकास, वहां बुनियादी सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए कई योजनाओं की घोषणाएं करती रहती हैं, मगर पंचायतों या जिला प्रशासन की लापरवाही के चलते वे कामयाब नहीं हो पातीं। सामाजिक फीचर लिखते समय इन मसलों पर ध्यान केंद्रित किया जा सकता है। इनमें से सभी समस्याएं अपने आप में अलग और गंभीर हैं। इनके सभी पहलुओं पर विस्तार से चर्चा की जा सकती है। हालांकि अखबारों–पत्रिकाओं में इन समस्याओं से संबंधित समाचार अक्सर प्रकाशित होते हैं, फिर भी फीचर के लिए ये विषय लगातार प्रासंगिक बने रहते हैं। सामाजिक समस्याओं पर आधारित फीचर लिखते समय तथ्यों और बुनियादी हकीकत का पता लगाने के लिए संबंधित क्षेत्र का भ्रमण और वहां लोगों से बातचीत करने की भी जरूरत पड़ सकती है।

7.3.3 महिलाओं, बच्चों, बुजुर्गों की समस्याओं से संबंधित

वैज्ञानिक उपलब्धियों, संचार माध्यमों और रहन–सहन के मामले में हमने चाहे जितनी तरक्की कर ली हो, समाज का एक काफी बड़ा तबका महिलाओं, बच्चों और बुजुर्गों के प्रति आधुनिक नजरिया नहीं विकसित कर पाया है। गांवों की बात तो दूर, शहरों में रहने वाले, शिक्षित और सभ्य कहे जाने वाले समाजों में भी अनेक लोग महिलाओं के प्रति संकुचित दृष्टिकोण रखते हैं। उनके पढ़ाई–लिखाई, स्वास्थ्य संबंधी मामलों में लड़कों की अपेक्षा कम ध्यान देते हैं। नौकरी और रोजगार के दूसरे क्षेत्रों में महिलाओं को प्रवेश की इजाजत नहीं देते। गांवों में महिलाएं प्रायः निरक्षर या कम पढ़ी–लिखी होती हैं। इसलिए वे नौकरियों या रोजगार के लिए घरों से बाहर कम ही निकल पाती हैं। वे घरों के भीतर रह कर पारंपरिक, पारिवारिक, पुश्तैनी धंधों में पुरुषों का हाथ बंटाती हैं लेकिन आर्थिक रूप से स्वावलंबी नहीं हो पातीं। चूंकि पारंपरिक भारतीय परिवारों में पुरुषों के भोजन कर लेने के बाद ही महिलाओं के भोजन करने की परंपरा है इसलिए वे आमतौर पर बचाखुचा खाकर अपना पेट भरती हैं। उनकी खूराक पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता। पुरुष उनके संतुलित भोजन पर ध्यान नहीं देते। यही वजह है कि हमारे देश की करीब चालीस प्रतिशत महिलाओं में रक्ताल्पता (एनीमिया) की शिकायत है। गर्भावस्था के दौरान संतुलित आहार न मिल पाने के कारण प्रसव के समय आज भी अनेक महिलाओं की मृत्यु हो जाती है। नवजात शिशुओं में कई तरह

की बीमारियों के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। यह समस्या कमोबेश शहरों और गांवों– दोनों जगहों पर मौजूद है। महिलाओं के पढ़ी–लिखी न होने के कारण बच्चों के पालन–पोषण पर बुरा असर पड़ता है। जानकारी न होने के कारण वे उनके खान–पान, साफ–सफाई आदि पर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए उतना ध्यान नहीं दे पातीं।

आमतौर पर बच्चों की देखभाल की जिम्मेदारी महिलाओं पर होती है। शहरी समाज में पुरुष जरूर बच्चों की देखभाल में महिलाओं का हाथ बंटाते हैं और उनके खान–पान, स्वास्थ्य, पढ़ाई–लिखाई के प्रति सजग रहते हैं, लेकिन ग्रामीण समाज में अब भी ऐसी जागरूकता कम देखने को मिलती है। आर्थिक रूप से कमजोर तबकों में बच्चों की देखभाल के प्रति प्रायः पुरुष और महिलाएं दोनों ही पर्याप्त ध्यान नहीं देते हैं। ऐसे में उपेक्षा के कारण बच्चों में न सिर्फ स्वास्थ्य और शिक्षा संबंधी बल्कि मानसिक विकास संबंधी कमजोरियां भी पैदा होती हैं। अनेक बच्चे हर साल कुपोषण के शिकार हो जाते हैं। हालांकि सरकार ने बाल विकास संबंधी योजनाएं शुरू की हैं। लेकिन कुछ तो योजनाएं संचालित करने वाली एजेंसियों की लापरवाही और कुछ लोगों में उनके प्रति जागरूकता और जानकारी की कमी की वजह से ये कार्यक्रम कामयाब नहीं हो पा रहे हैं।

चिकित्सा संबंधी सुविधाओं और स्वास्थ्य के प्रति लोगों में जागरूकता पैदा होने कारण लोगों की औसत आयु में बढ़ोतरी हुई है। असमय मृत्यु और संक्रामक रोगों से फैलने वाली महामारी से होने वाली मौतों में कुछ कमी आई है। नतीजतन, समाज में बुजुर्गों की संख्या काफी बढ़ी है। मगर संयुक्त परिवारों के टूटने और एकल परिवारों का प्रचलन बढ़ने से बुजुर्गों की देखभाल की समस्याएं भी पैदा हो रही हैं। गांवों में यह समस्या हालांकि शहरों की अपेक्षा कम गंभीर है, लेकिन परिवारों के बंटने के कारण वहां भी बुजुर्ग उपेक्षा के शिकार हैं। शहरों के एकल परिवारों में कामकाजी व्यस्तता के चलते बुजुर्गों की देखभाल ठीक से नहीं हो पाती। यही वजह है कि अपनी संतानों की उपेक्षा के कारण बुजुर्गों ने खुद ही वृद्धाश्रमों में शरण लेनी शुरू कर दी है। हालांकि सरकार ने वृद्धों की देखभाल और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए कानून बनाए हैं, कई योजनाएं भी शुरू की हैं, मगर इस समस्या का हल तलाश पाना अब भी कठिन बना हुआ है। यह समस्या न सिर्फ हमारे देश में, बल्कि दुनिया के दूसरे देशों में भी किसी न किसी रूप में मौजूद है।

महिलाओं, बच्चों, बुजुर्गों की समस्याओं, उनके अधिकारों को लेकर लिखे जाने वाले फीचर में अपने समाज के भीतर की समस्याओं को उठाने के साथ–साथ दूसरे समाजों की स्थिति से तुलना भी की जा सकती है। अगर किसी समाज में इन वर्गों के लिए कोई अच्छे कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं तो उनके बारे में भी बताया जा सकता है ताकि दूसरे समाज के लोग उससे प्रेरणा ले सकें। ऐसी समस्याओं को उजागर करने का एक उद्देश्य भी होना चाहिए कि फीचर के जरिए लोगों में जागरूकता पैदा हो।

7.3.4 सांप्रदायिक सौहार्द से संबंधित

हमारे समाज में अनेक जाति, समुदाय, वर्ग के लोग रहते हैं। पहले सभी वर्गों के लोग आपस में मिल कर रहते थे। हालांकि तब छुआछूत जैसी कुरीतियां व्यापक स्तर पर फैली हुई थीं मगर सभी एक–दूसरे के दुख–तकलीफ में सहभागी बनते थे। देश के विभाजन के बाद हिंदू–मुसलमान के झगड़े और सांप्रदायिक सौहार्द की भावना पर इसका काफी बुरा असर पड़ा। सांप्रदायिक वैमनस्यता की भावना अभी खत्म नहीं हुई

है, जिसके चलते समाज में सांप्रदायिक टकराव की स्थिति पैदा हो जाती है। एक समाज के भीतर रहने वाले दो समुदाय के लोगों के आपसी टकराव के चलते देश की अर्थ व्यवस्था और विकास पर बुरा असर पड़ता है। इसलिए सरकारों की लगातार कोशिश होती है कि सांप्रदायिक सौहार्द कायम रखा जा सके। कई गैरसरकारी संगठन लगातार इस प्रयास में जुटे हैं। इसके लिए जनजागरूकता अभियान चलाए जाते रहे हैं।

ऐसे में संचार माध्यमों ने भी अपनी जिम्मेदारी बखूबी निभाई है। हालांकि कुछ धार्मिक नेताओं की तरफ से विरोध के खतरे होने के कारण सांप्रदायिक सौहार्द के लिए कुछ करना या लिखना काफी नाजुक हो गया है लेकिन फीचर के माध्यम से सांप्रदायिक वैमनस्यता फैलाने वाले मसलों को उजागर करके लोगों को जागरूक बनाने की कोशिश की जा सकती है। यह हमारे समाज की एक बड़ी चुनौती है और इससे निपटना सभी नागरिकों का कर्तव्य है। इससे संबंधित विषयों का चुनाव करते और लिखते समय यह सावधानी बरतने की जरूरत होती है कि उससे किसी एक वर्ग को ठेस न पहुंचे या किसी एक वर्ग के पक्ष में अधिक झुकाव न हो। समस्याओं को उठाते वक्त संतुलित नजरिया होना इसकी प्रमुख शर्त होती है।

7.3.5 सामाजिक विकास के लिए चल रहे प्रयासों से संबंधित

समाज में अशिक्षा, अंधविश्वास, महिलाओं के प्रति संकुचित नजरिया जैसी समस्याओं और कुरीतियों से निजात पाने के लिए सरकारी और गैरसरकारी स्तर पर अनेक सराहनीय प्रयास किए जा रहे हैं। इन प्रयासों के चलते लोगों में जागरूकता आयी है। कई कुरीतियों को त्याग कर लोग वैज्ञानिक नजरिए से चीजों को देखने लगे हैं। कई इलाकों में अंधविश्वास उन्मूलन समितियां काम कर रही हैं जो लोगों को झाड़–फूंक, जादू–टोने, गंडा–तावीज, भूत–चुड़ैल जैसी मान्यताओं से बाहर निकालने की कोशिश में जुटी हैं। लोगों को अपने जाल में फंसा कर ठगने वाले तांत्रिकों–बाबाओं पर कानूनी शिकंजे कसे जाते हैं। मगर अब भी इस तरह की प्रवृत्तियां समाज में व्याप्त हैं। इन्हें पूरी तरह से खत्म करने में मीडिया और लेखकों की सक्रिय भूमिका जरूरी है। ग्रामीण और शहरी विकास के लिए सरकारें अनेक योजनाएं तैयार और लागू करती हैं। केंद्र ने ग्रामीण बिजलीकरण, सिंचाई और स्वास्थ्य से संबंधित कई योजनाओं की घोषणा की है। उन्हें लागू करने में जिला प्रशासन और पंचायतों की भूमिका महत्वपूर्ण होगी। देखा जाता है कि पंचायतों की निष्क्रियता के चलते कई योजनाओं का लाभ गांवों को नहीं मिल पाता और केंद्र से मुहैया कराए गए धन का सही तरीके से उपयोग नहीं हो पाता। इसी तरह शहरों में नगरपालिका और नगर परिषद जैसे स्थानीय निकायों की निष्क्रियता या अनियमितता की वजह से गलियों में बिजली, सड़कों की मरम्मत, साफ–सफाई जैसे जरूरी काम भी नहीं हो पाते। लोगों को इन योजनाओं की जानकारी उपलब्ध कराने, उनके अधिकारों का ज्ञान कराने और उनकी भूमिका को रेखांकित करने में मीडिया और मीडियाकर्मियों की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। इसलिए विकास संबंधी कार्यक्रमों से संबंधित विषयों का चुनाव करते समय यह ध्यान रखना जरूरी है कि विकास योजनाओं के बारे में जानकारी उपलब्ध कराने के साथ–साथ आम लोगों की भूमिका और उनके कर्तव्यों को भी रेखांकित किया जाए।

अनेक क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण, अंधविश्वास उन्मूलन, दहेज, तलाक और महिलाओं की उपेक्षा जैसी कुरीतियों के खिलाफ स्थानीय

स्तर पर बेहतर प्रयास हो रहे हैं। इससे लोगों में जागरूकता भी है। कई क्षेत्रों में महिलाओं और स्थानीय लोगों ने आपसी सहमति से दहेज उन्मूलन, बालिका शिक्षा को अनिवार्य रूप से लागू करने और शराबबंदी जैसे फैसले किए हैं और इससे उन क्षेत्रों में तेजी से सामाजिक परिवर्तन हुआ है। फीचर लेखन के लिए विषय का चुनाव करते समय ऐसे प्रयासों को भी उजागर और रेखांकित करने की जरूरत है ताकि दूसरे लोग इससे प्रेरणा ले सकें।

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षेप में उत्तर दीजिए।

1) सामाजिक फीचर से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) सामाजिक फीचर कितने प्रकार के हो सकते हैं? सामाजिक विकास संबंधी फीचर लेखन में विषय का चुनाव करते समय किन बातों का ध्यान रखना जरूरी है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) सामाजिक समस्याओं से संबंधित फीचर लेखन में मुख्य रूप से किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

.....

7.4 सामाजिक फीचर का उद्देश्य

जैसा कि आप जानते हैं, पत्रकारिता को जनतंत्र का पांचवां स्तंभ कहा जाता है। इसलिए सामाजिक विकास या इसके लिए चल रहे प्रयासों में मीडिया की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है। सामाजिक फीचर लेखन का उद्देश्य सामाजिक विकृतियों को उजागर करना, वैकल्पिक व्यवस्था सुझाना और इसके लिए चल रहे प्रयासों को उजागर करना होना चाहिए। यह काम अखबार–पत्रिकाएं कर रहे हैं, मगर कई बार

देखने में आता है कि लेखक समस्याओं को रेखांकित कर देना भर अपना कर्तव्य मान लेते हैं। समस्याओं को उजागर करने के साथ–साथ फीचर लेखक का यह कर्तव्य बनता है कि वह दूसरे समाजों से वे उदाहरण ढूंढ कर लाए जिनके चलते सामाजिक परिवर्तन या विकास के रास्ते खुले हैं। सिर्फ सरकारी योजनाओं की कमजोरियों या उनमें बरती जा रही अनियमितताओं को रेखांकित कर देने से फीचर लेखक का सामाजिक समस्याओं को उजागर करने और उन्हें दूर करने के प्रयासों का कर्तव्य पूरा नहीं हो जाता। लोगों में जागरूकता पैदा करने में भी उसे भूमिका निभाने की जरूरत होती है। इसलिए सामाजिक फीचर लेखक से सामाजिक कार्यकर्ता जैसी प्रतिबद्धता, संवेदनशीलता और सतर्कता की अपेक्षा की जाती है। जब तक फीचर लेखक में समाज के प्रति संवेदनशीलता और समस्याओं से जूझ रहे लोगों के प्रति आत्मीयता का भाव नहीं होगा, उसका लेखन महज औपचारिक बन कर रह जाएगा।

7.5 सामाजिक फीचर की प्रस्तुति और भाषा–शैली

जैसा कि हम ऊपर कह आए हैं, सामाजिक फीचर लेखक में सामाजिक कार्यकर्ता की तरह प्रतिबद्धता, संवेदनशीलता और सजगता होनी चाहिए। विषय का चुनाव करते समय उसे खासतौर से यह भी ध्यान रखने की जरूरत होती है कि वह जिस विषय को उठाए उस पर विस्तार और गहराई से अध्ययन करे। इस क्षेत्र में अनेक तरह की समस्याएं हैं और उनका विस्तार काफी है इसलिए एक विषय को दूसरे के साथ न मिलाएं। विषय का चुनाव करते समय सावधानी बरतें कि किस मुद्दे पर बात करना चाहते हैं।

ऐसा नहीं होना चाहिए कि आप किसी ग्रामीण इलाके में अंत्योदय कार्यक्रम पर फीचर लिख रहे हैं और उसमें वहां की बिजली और पानी की समस्या पर भी साथ ही लिखने बैठ जाएं। कुछ लोग समस्या कुछ और उठाते हैं और उस क्षेत्र की सारी समस्याओं को गिनाने बैठ जाते हैं। ऐसे में फीचर अपने मूल विषय से तो भटक ही जाता है, समस्या का पूरी तरह विवेचन नहीं हो पाता और पाठक को पूरा बोध नहीं हो पाता। इस तरह के घालमेल से बचना फीचर लेखक के लिए बहुत जरूरी होता है और यह तभी संभव है जब आप उस विषय की गहराई से पड़ताल करें, आंकड़े जुटाएं और समस्या के विस्तार को जानें। इस समस्या से निपटने की दिशा में दूसरे क्षेत्रों में क्या प्रयास हो रहा है, इसकी भी जानकारी रखें। अधूरी जानकारी या तथ्यों के आधार पर फीचर न लिखें।

सामाजिक फीचर के साथ एक समस्या यह भी होती है कि फीचर लेखक जिस मुद्दे पर संबंधित क्षेत्र के लोगों या विशेषज्ञों से बात करने जाते हैं तो वे प्रायः सरकारी योजनाओं की कमजोरियों और प्रशासन की अनियमितताओं के बारे में बढ़–चढ़ कर बताने लगते हैं। ऐसे में उनकी बातों में आकर या भावना में बह कर फीचर लेखक के अपने मूल उद्देश्य से भटकने का खतरा रहता है। इसलिए फीचर लेखक को एक–पक्षीय नहीं होना चाहिए। इसके लिए योजनाओं का संचालन कर रहे लोगों से भी बातचीत करनी चाहिए और दोनों पक्षों की बातों का तार्किक विश्लेषण करना चाहिए। क्या सही है और क्या होना चाहिए। इस पर विशेष ध्यान होना चाहिए। कई बार सरकारी या स्वयंसेवी संगठनों के आंकड़े भी भ्रम पैदा कर सकते हैं इसलिए आंख बंद करके उन पर भरोसा करने की बजाय तार्किक ढंग से उनका विश्लेषण और अध्ययन करने के बाद ही उन्हें अंतिम रूप से सच मानना चाहिए।

विषय का चुनाव सही हो, उससे संबंधित पर्याप्त सामग्री उपलब्ध हो, समस्याओं से संबंधित व्यापक अध्ययन हो, मगर यदि सही तरीके से उसे प्रस्तुत न किया जाए तो पाठक पर फीचर का प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए फीचर लिखते समय भाषा और शैली का खासतौर से ध्यान रखना चाहिए। चूंकि सामाजिक विषयों के फीचर सभी वर्गों के पाठकों द्वारा पढ़े जाते हैं इसलिए भाषा सहज, सरल और प्रवाहमय होनी चाहिए। शब्द दुरूह और विचार उलझे हुए न हों। ऐसा होने पर बात चाहे जितनी महत्त्वपूर्ण हो, पाठक के सिर के ऊपर से निकल जाती है। इसलिए बातचीत की शैली में उसे प्रस्तुत करने की कोशिश होनी चाहिए। इसके अलावा बातों को क्रम से रखा जाना चाहिए। जिस बात को एक जगह शुरू किया जाए उसे विस्तार से बताते हुए वहीं खत्म कर दिया जाना चाहिए, उसके बाद दूसरी बात को आगे बढ़ाना चाहिए। कई बातों को आपस में मिलाने से विषय को समझने में बाधा पड़ जाती है। इसलिए लिखना शुरू करने से पहले बातों के क्रम को दिमाग में बिठा लेना चाहिए। हो सके तो पहले से अलग कागज पर इसके क्रम के नोट्स तैयार कर लें।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) सामाजिक फीचर लेखन का क्या उद्देश्य होना चाहिए? उसे लिखते समय लेखक को किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

.....

2) फीचर की प्रस्तुति में किन बातों की विशेष रूप से ध्यान रखने की जरूरत होती है?

.....

.....

.....

.....

.....

7.6 सांस्कृतिक फीचर से तात्पर्य

जैसा कि ऊपर कहा गया हैं, भारतीय समाज में हर प्रांत की अपनी अलग भाषा है, परंपराएं हैं, उत्सव और त्योहार मनाने के तरीके हैं, रीतिरिवाज और मान्यताएं हैं। इस वजह से अलग–अलग समाजों में अलग–अलग संस्कृतियां हैं। हर प्रांत के अपने नृत्य, गायन शैली, वाद्ययंत्र और उन्हें गाने–बजाने प्रस्तुत करने के तरीके हैं। लोक संस्कृति में तो भिन्नता है ही, शास्त्रीय परंपरा में भी अंतर नजर आता है। आप देखेंगे कि उत्तर भारत की शास्त्रीय गायन–वादन–नृत्य परंपरा दक्षिण भारत की परंपरा से अलग

है। शायद इस बात से भी आप परिचित होंगे कि उत्तर भारत में आमतौर पर भातखंडे की गायन परंपरा चलती है जबकि दक्षिण में कर्नाटक संगीत की परंपरा है। इसी तरह नृत्य में उत्तर में कथक है तो दक्षिण में भरतनाट्यम, कुचिपुड़ि और कथकलि। उड़ीसा में ओडिसी पहले लोक नृत्य हुआ करता था, लेकिन केलुचरण महापात्र ने उसे शास्त्रीय नृत्य के रूप में प्रतिष्ठित किया और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाई। इसी प्रकार हर प्रदेश की अपनी लोक गायन–वादन और नृत्य शैलियां हैं। बंगाल में रवींद्र संगीत है तो असम में छऊ, हिमाचल में स्वांगटेकी तो पंजाब में भंगड़ा जैसे लोक नृत्य हैं। इसके अलावा हर क्षेत्र में अभिनय की अपनी परंपराएं हैं। राष्ट्रीय स्तर पर रंगमंच और अभिनय ने अपनी पहचान तो बनाई ही है, जिसमें निरंतर नए प्रयोग हो रहे हैं।

सांस्कृतिक फीचर से तात्पर्य उन सभी मंचीय कलाओं से है जो लोक या शास्त्रीय रूप में हमारे समाज में मौजूद हैं। हर त्योहार और उत्सव पर सांस्कृतिक आयोजन की परंपरा है। कहीं पुरुष और स्त्रियां दोनों मिल कर इन आयोजनों में भाग लेते हैं तो कहीं अलग अलग। पंजाब में भंगड़ा मुख्य रूप से पुरुषों द्वारा किया जाने वाला नृत्य है तो गिद्दा महिलाओं का नृत्य है। छत्तीसगढ़ में नाचा नाट्यशैली और पंडवानी गायन का बहुत प्रचलन है। देश के हर हिस्से में लोकगीत गायन की परंपरा को पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं ने अधिक सुरक्षित रखा है। शायद ही कोई त्योहार, व्रत या उत्सव ऐसा हो जिस पर महिलाओं के पास गीत न हों।

लोक संस्कृति में गायन और अभिनय की परंपरा ज्यादातर अलिखित रूप में श्रुति परंपरा के रूप में मौजूद है। इसलिए इसमें दूसरी संस्कृतियों के आकर मिल जाने या इनके मूल स्वरूप के लुप्त हो जाने का खतरा अधिक होता है। आपने महसूस किया होगा कि व्यावसायिक संगीत कंपनियों ने कुछ लोक गायकों को राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित करने के नाम पर लोक संगीत के मूल स्वरूप को काफी नुकसान पहुंचाया है। पारंपरिक गीत के स्थान पर लोक गीतों के नाम पर अश्लील और भोंडे गीत प्रचलन में आ गए हैं। इसका नतीजा यह निकला है कि कई लोक वाद्य धीरे–धीरे लुप्त होने के कगार पर हैं। होरी, कजरी, चैती, आल्हा, बिरहा, लोरिकी, नचारी, सोहर, विवाह गीत, गारी जैसे उत्तर भारत के पारंपरिक गीतों में काफी विकृति आ गई है या उनका गायन बंद हो चुका है। धोबी नाच, गोंड़ नाच जैसी अभिनय प्रधान गायन–वादन शैलियां लुप्त हो रही हैं, नौटंकी का प्रचलन लगभग खत्म हो चुका है। इनके स्थान पर ऑर्केस्ट्रा और भोंडे नृत्य–प्रधान गायन की परंपरा तेजी से फैली है।

सांस्कृतिक फीचर का सम्बन्ध इन लुप्त होती सांस्कृतिक परंपराओं को सुरक्षित रखने और प्रोत्साहित करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे प्रयास से भी है। इलाहाबाद में हर साल लगने वाला नौटंकी मेला और पश्चिम बंगाल के नदिया जिले में बाउल मेला अपनी लोक संस्कृति को लुप्त होने से बचाने के बेहतर तरीके हैं मगर सरकारी स्तर पर इन्हें प्रोत्साहन न मिलने और लोगों में इनके प्रति रुचि पैदा करने की कोशिश न हो पाने के कारण ऐसे प्रयास बहुत प्रभावी साबित नहीं हो पा रहे हैं। ऐसे प्रयासों को रेखांकित करना भी सांस्कृतिक फीचर लेखक की जिम्मेदारी होनी चाहिए।

7.7 सांस्कृतिक फीचर के लिए विषय का चयन

संस्कृति के अंतर्गत आमतौर पर मंचीय कलाएं आती हैं जिनमें गायन, वादन, नृत्य और अभिनय प्रमुख हैं चाहे वे शास्त्रीय हों या लोक। इसके अलावा साहित्यिक संगोष्ठियों,

कविता या कहानी पाठ, चित्रकला आदि को भी इसी के अंतर्गत रखा जाता है। हमारी फिल्में भी लोकचेतना जगाने और मनोरंजन के साधन के रूप में काफी लोकप्रिय हुई हैं। टेलीविजन का तेजी से प्रसार होने के कारण न सिर्फ ज्यादातर घरों में टेलीविजन सेट आ गए हैं बल्कि टी.वी चैनलों की भरमार हो गई है और चौबीसों घंटे कार्यक्रमों का प्रसारण शुरू हो गया है। इस तरह फिल्में और टेलीविजन भी हमारी संस्कृति का अहम हिस्सा बन गए हैं। सांस्कृतिक फीचर के दायरे में इन्हें भी शामिल किया जाता है। सिनेमा और टेलीविजन कार्यक्रमों पर फीचर की परंपरा काफी समृद्ध हुई है। हर अखबार और पत्रिका इस क्षेत्र से संबंधित खबरों, कलाकारों से साक्षात्कार और कार्यक्रमों की समीक्षाएं प्रमुखता से प्रकाशित करने लगा है। लगभग सभी अखबार फिल्म और टेलीविजन कार्यक्रमों पर सप्ताह में एक दिन अलग से विशेष परिशिष्ट निकालने लगे हैं। बाकी सांस्कृतिक आयोजनों की खबरें या तो दैनिक समाचारों के साथ प्रकाशित की जाती हैं या शहर के लिए अलग से निकाले जाने वाले परिशिष्ट में शामिल कर ली जाती हैं। इस तरह सांस्कृतिक आयोजनों पर फीचर लेखन की गुंजाइश काफी बढ़ी है। सांस्कृतिक फीचर के लिए निम्नलिखित क्षेत्र से सम्बन्धित विषय चुने जा सकते हैं।

- संगीत
- नृत्य
- अभिनय
- चित्रकला
- साहित्य
- फैशन और रहन–सहन

7.7.1 संगीत

संगीत संबंधी फीचर के अंतर्गत गायन और वादन को लिया जा सकता है। इसमें शास्त्रीय, लोक और इन दिनों प्रचलन में पॉप टॉक फ्यूजन संगीत और जैज भी शामिल हैं। संगीत के क्षेत्र में निरंतर नए प्रयोग हो रहे हैं। शास्त्रीय संगीत के जानकार नए रागों की रचनाएं करने के साथ–साथ लोक संगीत को मिलाकर नयी तरह का संगीत रच रहे हैं। हिंदुस्तानी और कर्नाटक के मेल से नए राग और धुनें रचने के प्रयोग भी काफी पहले से हो रहे हैं। अब यह दायरा सिर्फ अपने देश तक सीमित नहीं रह गया है। दूसरे देशों में प्रचलित लोक परंपराओं से भी संगीत उठाकर हिंदुस्तानी संगीत में पिरोने की कोशिश की जा रही है। इसमें जैज और दूसरे पश्चिमी संगीत का काफी अच्छा मेल दिखाई देता है। इन दिनों फ्यूजन संगीत काफी लोकप्रिय हो रहा है।

संगीत को आमतौर पर तीन भागों में बांट कर देखा जाता है– शास्त्रीय, लोक और सुगम संगीत। सुगम संगीत के अंतर्गत भजन, कीर्तन, गजल आदि के गायन आते हैं। पश्चिम बंगाल में गाए जाने वाले रवींद्र संगीत को सुगम और शास्त्रीय दोनों श्रेणियों में रखा जा सकता है। इसके अलावा पिछले कुछ सालों से पॉप संगीत का काफी प्रचलन हुआ है, जिसमें खासतौर से तेज संगीत वाले पंजाबी गीतों की प्रमुखता होती है। इसी तरह धुनों के साथ–साथ वाद्य यंत्रों को लेकर भी नए–नए प्रयोग हो रहे हैं। कई मामलों में लुप्त हो रहे पारंपरिक वाद्य यंत्रों का इस्तेमाल किया जा रहा है तो अनेक स्तरों पर आधुनिक वाद्य यंत्रों का भी प्रयोग हो रहा है।

आधुनिक वाद्य यंत्रों और विदेशी धुनों के इस्तेमाल की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण हमारे कई प्राचीन और पारंपरिक वाद्य यंत्र और लोक धुनें लुप्त हो रही हैं। इन्हें सहेज कर रखने के प्रयास बहुत कम दिखाई देते हैं। राजस्थान में कोमल कोठारी ने राजस्थान और बाहर के भी लुप्त होते वाद्य यंत्रों और लोक धुनों को सहेज कर रखने के लिए एक संग्रहालय की स्थापना भी की, न सिर्फ लुप्त होती संगीत परंपरा को उन्होंने सहेजा बल्कि इसके लिए नए गायकों–वादकों को भी तैयार किया और परंपराओं को आगे बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया। राजस्थान के लंगा और मांगणियार गायकों को पहचान दिलाने में उनका काफी योगदान है। संगीत पर फीचर के लिए विषय का चुनाव करते समय प्रचलित परंपराओं के बारे में बताने के साथ–साथ लुप्त होती परंपराओं पर भी प्रकाश डालने की कोशिश होनी चाहिए और लोगों में जागरूकता पैदा करने का प्रयास होना चाहिए ताकि वे प्राचीन परंपराओं के प्रति प्रोत्साहित हों और उन्हें आगे बढ़ाने में सहयोग करें।

7.7.2 नृत्य

नृत्य भी संगीत की ही एक विधा है, मगर पिछले काफी समय से इसने अपनी स्वतंत्र पहचान बना ली है। गायन और वादन की तरह नृत्य की भी दो धाराएं हैं– शास्त्रीय और लोक। शास्त्रीय परंपरा में कथक, भरतनाट्यम, कथकलि, कुचिपुड़ी, ओडिसी, मोहिनी अट्टम आदि आते हैं। लोक नृत्य हर प्रांत में अनेक रूपों में प्रचलित हैं। गायन–वादन की तरह नृत्य में भी नित नए प्रयोग हो रहे हैं। एकल नृत्य, समूह नृत्य, नृत्य नाटिका (बैले) आदि प्रचलन में हैं। नृत्य में गायन–वादन के साथ–साथ अभिनय की भी गुंजाइश होती है। हमारे यहां कृष्ण लीला पर आधारित अनेक नर्तकों ने नृत्य संरचनाएं तैयार की हैं। इसी तरह बैले यानी नृत्य नाटिका चूंकि अभिनय प्रधान होती है, इसमें नाटक के तत्त्व काफी मात्रा में पाए जाते हैं। जब से फिल्मों में नृत्य का प्रचलन बढ़ा है, नए प्रयोग काफी होने लगे हैं।

7.7.3 अभिनय

हालांकि अभिनय शब्द मुख्य रूप से नाटकों के लिए प्रयोग होता रहा है, लेकिन फिल्मों और टेलीविज़न धारावाहिकों के प्रचलन से यह व्यापक अर्थ में प्रयुक्त होने लगा है। अभिनय, नायक–नायिका, खलनायक, सहनायक या विदूषक किसी भी रूप में हो सकता है। नाटकों के बारे में अक्सर साहित्यिक कार्यक्रमों के अंतर्गत लिखा–पढ़ा जाता है। जबकि फिल्मों और टेलीविजन धारावाहिकों के बारे में मनोरंजन की विधाओं के अंतर्गत समीक्षा होती है। यही वजह है कि ज्यादातर पत्र–पत्रिकाओं में आज भी जहां फिल्मों के लिए अलग से परिशिष्ट निकाला जाता है, नाटकों की समीक्षाएं साहित्यिक कार्यक्रमों के अंतर्गत ही की जाती है। इस अर्थ में कहा जा सकता है कि आज भी नाटकों को फिल्मों और धारावाहिकों की अपेक्षा गंभीर विधा के रूप में देखा जाता है।

अभिनय संबंधी फीचर के अंतर्गत न सिर्फ अभिनय, बल्कि कथा–वस्तु, मंच–सज्जा, प्रकाश व्यवस्था, ध्वनि संयोजन, पार्श्व संगीत, परिधान, निर्देशन, संवाद शैली आदि पर भी विचार किया जाता है। फिल्मों और धारावाहिकों के संदर्भ में भी ये बातें लागू होती हैं। नाटकों से इतर इन विधाओं में कैमरे का संचालन, स्थान का चुनाव, संपादन कौशल आदि की भी समीक्षा की जाती है। अभिनय संबंधी फीचर लेखन मुख्य रूप से समीक्षात्मक होता है इसलिए इसमें अधिक शोध या आंकड़े एकत्र करने की जरूरत नहीं होती। लेकिन फिल्मों और धारावाहिकों के अभिनेताओं–अभिनेत्रियों की

लोकप्रियता को देखते हुए उनके बारे में दिलचस्प या गपशप जैसी बातें प्रकाशित करने का प्रचलन इधर कुछ समय से काफी तेजी से बढ़ा है। इस तरह के फीचर पाठकों की रुचि को भुनाने की दृष्टि से उपयुक्त हो सकते हैं, चटखारे लेकर इन्हें पढ़ा भी जाता है, लेकिन ऐसे लेखन को गंभीर लेखन की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। इस तरह के चलताऊ फीचर लेखन के कारण ही हिंदी में गंभीर फिल्म समीक्षाएं लिखने की परंपरा विकसित नहीं हो पाई है। अभिनय संबंधी फीचर लेखन करने वाले को ऐसी सस्ती लोकप्रियता से बचना चाहिए।

7.7.4 चित्रकला

पहले माना जाता था कि चित्रकला महज सजावट की वस्तु है, लेकिन धीरे–धीरे यह धारणा टूटी है। साहित्य, संगीत और दूसरी मंचीय कलाओं की तरह चित्रकला और मूर्तिकला भी अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। अन्य विधाओं में शब्दों और भंगिमाओं के जरिए अभिव्यक्ति की जाती है तो चित्रकला में रंगों और रेखाओं के माध्यम से दूसरी कलाओं की तरह ही चित्रकला में भी नित नए प्रयोग हो रहे हैं और हाल के वर्षों में उसका बाजार भी बना है। आधुनिक कलाकृतियां खासी मंहगी बिकने लगी हैं। लोक चित्रकला शैलियों को आधुनिक शैलियों के साथ मिला कर नया रचने की कोशिश भी की जा रही है। यहां तक कि इसमें भित्ति–चित्र, संस्थापन, छापा चित्र, फोटोग्राफी आदि को भी एक–दूसरे के साथ मिला कर नए प्रयोग किए जा रहे हैं। चित्रकला अब रंगों और रेखाओं के अलावा धातु, चमड़ा, कांच, मिट्टी, लकड़ी आदि के जरिए भी बनाई जा रही है। इधर रद्दी की टोकरी में फेंक दी जाने वाली वस्तुओं के इस्तेमाल से भी रचनाएं तैयार करने का प्रचलन बढ़ा है। भवनों के नक्शे तैयार करने और उनकी आंतरिक साजसज्जा में भी चित्रकला की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो रही है।

चित्रकला और मूर्ति शिल्प की लोक परंपरा काफी समृद्ध है। प्राचीन काल में अजंता और एलोरा की गुफाओं में बने भित्तिचित्र इसके उत्कृष्ट नमूने हैं। मध्यकाल में भवन निर्माण में चित्रकला की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। लघु चित्र यानी मिनिएचर कला हमारे देश की विशिष्ट कला है, जिसमें हिमाचल और राजस्थान का काफी योगदान है। आज भी गांवों में कला की अनेक लोक शैलियां प्रचलित हैं। कांगड़ा शैली, मधुबनी, कालीघाट आदि चित्रकला की लोक शैलियां हैं। लोक कलाओं में आमतौर पर प्राकृतिक रंगों का इस्तेमाल किया जाता रहा है। लोक और शास्त्रीय चित्रकलाओं को संरक्षित और प्रोत्साहित करने के लिए हर राज्य में सरकारी संस्थाएं और अकादमियां हैं और केंद्रीय स्तर पर ललित कला अकादमी है, जो निरंतर कला प्रदर्शनियां और कलाकारों को प्रोत्साहित करने के लिए कार्यक्रम आयोजित करती रहती हैं। बड़े शहरों में अनेक निजी कला दीर्घाएं हैं जहाँ प्रदर्शनियाँ लगती हैं और कई ऐसे संस्थान हैं जो कलाओं को प्रोत्साहन देते हैं। चित्रकला पर फीचर लिखते समय कला प्रदर्शनियों पर लिखने के साथ–साथ लोक कलाओं के बारे में भी लिखने की काफी संभावना होती है। एक उदाहरण देखें–

''पीढ़ियों से चले आ रहे शिल्पों से जुड़े अधिकांश कलाकार ग्रामीण अंचलों से हैं जो इस बात से बेखबर है कि देश–दुनिया में क्या हो रहा है। 'पारंपरिक कारीगर' ऐसे ही शिल्प और शिल्पियों का संरक्षण करती है। शिल्पियों को नए डिजाइन, नए विषय, नई तकनीक, नई खोज और नए बाजार की जानकारी देती है, उन्हें प्रोत्साहित करती है ताकि उनके कार्य का स्तर सुधरे, समय बचे और श्रम कम हो। संस्था द्वारा कलाकारों

के बच्चों में इन कलाओं के प्रति लगाव और कुशलता पैदा करने के लिए कार्यशालाओं का आयोजन करता है।''

(परंपरा के लिए पहलः निर्मल डोसी, सहारा समय – 1 जून 2005)

7.7.5 साहित्य

अखबारों–पत्रिकाओं में आमतौर पर साहित्यिक गोष्ठियों की खबरें प्रकाशित होती हैं, लेकिन रविवारी या विशेष परिशिष्टों में साहित्यकारों या साहित्यिक विधाओं पर लेख लिखने की परंपरा भी है। साहित्य के लिए अलग से अनेक पत्रिकाएं निकलती हैं। इसलिए अखबारों में साहित्य पर उतना जोर नहीं होता जितना साहित्यिक पत्रिकाओं में होता है। कई अखबार इस आधार पर साहित्य संबंधी फीचर और लेख प्रकाशित करने की परंपरा को बंद कर चुके हैं। फिर भी लिखित साहित्य के साथ–साथ मौखिक साहित्य की परंपरा पर अक्सर उनमें कुछ न कुछ प्रकाशित होता ही रहता है। लिखित साहित्य के अलावा लोक में अब भी मौखिक साहित्य की काफी समृद्ध परंपरा है। लिखित साहित्य की अधिकता और प्रकाशन संबंधी सुविधाओं के कारण लोक और मौखिक की परंपरा धुंधली होती जा रही है। देवेंद्र सत्यार्थी जैसे कुछ लोगों ने गांव–गांवघूम कर लोक और मौखिक साहित्य को लिपिबद्ध करने का काम किया। सरकारी संस्थाएं भी इसके अध्ययन को प्रोत्साहित करती हैं। लेकिन इस काम में अपेक्षित तेजी नहीं दिखाई देती। कई अखबारों में साहित्यिक गोष्ठियों, पुस्तक, लोकप्रिय समारोहों या किसी साहित्याकार के जन्मदिन संबंधी समाचार छपते हैं या बड़े साहित्यिक आयोजन की रिपोर्ट छपती है। साहित्यिक फीचर लेखन लिखते समय लिखित साहित्य के अलावा मौखिक और लोक साहित्य पर भी विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। यह इसलिए भी जरूरी है कि लोग इसके प्रति जागरूक हों और उसे संरक्षित, सुरक्षित रखने की कोशिश करें।

7.7.6 फैशन और रहन–सहन

संस्कृति के क्षेत्र में इन दिनों फैशन एक महत्त्वपूर्ण विषय के रूप में उभर कर आया है। पत्र–पत्रिकाएं और टेलीविजन चैनल फैशन पर फीचर अधिक देने लगे हैं। हालांकि इसकी एक बड़ी वजह फैशन उद्योग में लगी कंपनियों के विज्ञापन पाने की मंशा भी है। लेकिन फैशन अब हमारे जीवन में काफी गहराई तक प्रवेश कर चुका है और इसे नजरअंदाज कर पाना मुश्किल है। आमतौर पर फैशन का अर्थ पहनावे और रहन–सहन से लगाया जाता है, लेकिन यह इतने तक सीमित नहीं है। कपड़ों की डिजाइन से लेकर महिलाओं के आभूषण, सौंदर्य प्रसाधन, नेल पॉलिश, बैग, कपड़ों और बालों की स्टाईल, चलने का तरीका, सजने–संवरने की शैलियों तक को लेकर अध्ययन हो रहे हैं। फैशन उद्योग में लगी कंपनियां फैशन शो आयोजित कर अपने उत्पाद के प्रचार–प्रसार और लोगों को उनके प्रति आकर्षित करने की कोशिश करती हैं। इसके लिए वे मीडिया का सहारा लेती हैं। सौंदर्य प्रतियोगिताओं, भूमंडलीकरण और फैलते बाजार के इस दौर में फैशन संबंधी फीचर काफी प्रचलन में हैं।

बोध प्रश्न 3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए।

1) सांस्कृतिक फीचर से आपका क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) लोक संस्कृति के संरक्षण–संवर्धन में सांस्कृतिक फीचर किस प्रकार सहायक सिद्ध हो सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) क्या फिल्मों और टेलीविजन धारावाहिकों की लोकप्रियता से नाटकों पर बुरा प्रभाव पड़ा है? अभिनय संबंधी फीचर लेखन में किस प्रकार की सावधानियां बरतने की जरूरत होती है?

.....

.....

.....

.....

.....

7.8 सांस्कृतिक फीचर के उद्देश्य

सांस्कृतिक फीचर लेखन का उद्देश्य नयी संस्कृति के विकास के बारे में जानकारी उपलब्ध कराने, उसके सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओं को उजागर करने के साथ–साथ पारंपरिक संस्कृति पर मंडरा रहे खतरों से भी अवगत कराना होता है। फैशन के प्रति अंधानुकरण के चलते समाज में कई प्रकार की विकृतियां पैदा होने लगी हैं। समाज को उनसे अवगत कराना सांस्कृतिक फीचर का मकसद होना चाहिए। संगीत और नाटक–नृत्य जैसी मंचीय कलाओं में हो रहे नए प्रयोगों की जानकारी उपलब्ध कराने के साथ–साथ गायन–वादन–नृत्य–अभिनय आदि की लुप्त होती परंपराओं के बारे में जानकारी देने और उनके संरक्षण–संवर्धन के प्रति लोगों को जागरूक बनाने की कोशिश भी होनी चाहिए। सांस्कृतिक फीचर का अर्थ सिर्फ मंचीय कलाओं या फैशन संबंधी कार्यक्रमों की खबरें देना या समीक्षा करना भर नहीं होता।

इसका मकसद परंपराओं और संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन के लिए लोगों में जागरूकता पैदा करना भी होना चाहिए।

7.9 सांस्कृतिक फीचर की प्रस्तुति और भाषा शैली

सांस्कृतिक फीचर का क्षेत्र विस्तृत है और इसके अंतर्गत आने वाले सभी विषयों की प्रकृति एक दूसरे से भिन्न होती है। इसलिए इन पर फीचर लिखना सामाजिक, आर्थिक, खेल या दूसरे विषयों की अपेक्षा अलग तरह के कौशल की मांग करता है। सांस्कृतिक फीचर लिखने के लिए संस्कृति की गहरी समझ होना जरूरी है। इसे सिर्फ आंकड़े जुटाकर या लोगों से बातचीत करके नहीं लिखा जा सकता। ऐसा करने से फीचर की विश्वसनीयता नहीं बन पायेगी।

संगीत के बारे में फीचर लिखने के लिए जरूरी है कि आपको रागों, तालों और वाद्य यंत्रों आदि की जानकारी हो। अन्यथा इस पर फीचर लिखते समय अर्थ का अनर्थ होने का खतरा बना रहता है। इसी तरह नृत्य और अभिनय पर लिखते समय उसके सभी पक्षों की बारीकियों को जानना जरूरी है। मंच सज्जा, प्रकाश व्यवस्था, ध्वनि संयोजन, तकनीकी प्रयोग, संवाद, निर्देशन, परिधान आदि के बारे में भी समझना जरूरी है। इसी तरह साहित्य पर फीचर लिखने वाले से उम्मीद की जाती है कि उसकी साहित्य में गहरी रुचि हो और उसमें चल रही गतिविधियों की भी जानकारी हो। हालांकि फैशन और सिनेमा पर लिखने का प्रचलन इन दिनों खूब है और ज्यादातर पत्रकारिता में प्रवेश करने वाले युवा इसके प्रति आकर्षित भी होते हैं, लेकिन वे या तो इससे संबंधित विषयों पर शुद्ध मनोरंजनपरक फीचर या गपशप जैसी चीजें लिखते हैं।

सांस्कृतिक फीचर लेखन के प्रति गंभीरता न होने की वजह से अभी तक हिंदी में यह सिर्फ मनोरंजन की चीज बना हुआ है। दूसरी अनेक भाषाओं में सिनेमा, फैशन, संगीत आदि पर गंभीर लेखन की परंपरा काफी पहले शुरू हो गई थी। इसलिए बिना कौशल और क्षेत्र विशेष की बारीकियों की जानकारी के ऐसे फीचर लेखन की कोशिश नहीं करनी चाहिए। दूसरे, सांस्कृतिक लेखन के लिए विषय का चुनाव करते समय लेखन के उद्देश्यों को पहले से निर्धारित कर लेना चाहिए। तभी सार्थक और गंभीर सांस्कृतिक फीचर लेखन संभव हो सकेगा। सांस्कृतिक फीचर की भाषा में एक प्रकार की गरिमा होनी चाहिए। इसका आशय यह नहीं कि तत्सम शब्दों की भरमार कर दी जाए। इसी प्रकार शैली में भी सहज प्रवाह आवश्यक है। इन सबके बिना फीचर प्रभावहीन हो जाता है।

बोध प्रश्न –4

निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षेप में उत्तर दीजिए ।

1) सांस्कृतिक फीचर का क्या उद्देश्य होना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

2) गंभीर और सार्थक सांस्कृतिक फीचर लेखन के लिए क्या–क्या सावधानियां बरतनी आवश्यक है?

.....

.....

.....

.....

.....

7.10 सारांश

- समाज से जुड़ी समस्याओं पर फीचर लेखन सामाजिक फीचर कहलाता है। आर्थिक, वैज्ञानिक, खेल आदि के लिए अलग से फीचर लेखन होता है।
- सामाजिक परंपराओं, बुनियादी समस्याओं, बच्चों, बुजुर्गों, महिलाओं, सामाजिक जागरूकता पैदा करने और विकास से संबंधित प्रयासों आदि को लेकर सामाजिक फीचर लिखे जा सकते हैं।
- सामाजिक फीचर का उद्देश्य सामाजिक समस्याओं को उजागर करने के साथ–साथ लोगों में जागरूकता पैदा करना भी होना चाहिए। सामाजिक फीचर के लिए विषय का चुनाव करते समय पहले से स्पष्ट होना चाहिए कि आप किस समस्या पर लिखने जा रहे हैं और उसका क्या मकसद है। साथ ही विषय को प्रस्तुत करते समय बातों को क्रम से रखना चाहिए, एक दूसरे में गड्डमड्ड नहीं करना चाहिए। भाषा सरल और सहज होनी चाहिए।
- हालांकि संस्कृति समाज का अभिन्न हिस्सा है, लेकिन इसमें गायन–वादन–नृत्य–अभिनय–चित्र और मूर्ति कला आदि से जुड़े मुद्दे सामाजिक समस्याओं से भिन्न होती हैं इसलिए इसे अलग क्षेत्र के रूप में देखा जाना उचित है।
- सांस्कृतिक फीचर के अंतर्गत संगीत, नृत्य, अभिनय, साहित्य, फैशन, रहन–सहन, सिनेमा और टेलीविजन से संबंधित लेखन आता है।
- सांस्कृतिक लेखन के लिए संबंधित क्षेत्र की बारीकियों की जानकारी होना जरूरी है। इसलिए इसमें दूसरे क्षेत्रों की अपेक्षा ज्यादा विशिष्टता अर्जित करनी पड़ती है।
- सांस्कृतिक लेखन के प्रति हिंदी में प्रायः गंभीरता का अभाव है, इसलिए इस क्षेत्र में प्रवेश करने वाले नए लोगों से अपेक्षा की जाती है कि वे विषय के बारे में गंभीरता से जानकारी रखे बिना सतही और अगंभीर लेखन से बचें।

अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर विस्तार से दें।

1) सामाजिक फीचर से क्या तात्पर्य है। इसे दूसरे क्षेत्रों के विषयों से किस प्रकार अलग माना जा सकता है?

2) सामाजिक फीचर लेखन का क्या उद्देश्य होना चाहिए?

3) सामाजिक फीचर के लेखक से सामाजिक कार्यकर्ता की तरह संवेदनशील और जागरूक होने की अपेक्षा क्यों की जाती है?

4) सांस्कृतिक फीचर का दायरा कहां तक है और इसके लिए विषय का चुनाव करते समय किस तरह की सावधानियां बरतनी जरूरी हैं?

5) सार्थक और गंभीर सांस्कृतिक लेखन की परंपरा विकसित करने के लिए किस तरह के प्रयास किए जाने चाहिए?

7.11 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखिए उपभाग 7.2

2) उपभाग 7.3 के आधार पर उत्तर लिखिए।

3) इकाई को शुरू से अंत तक पढ़कर उत्तर लिखिए।

बोध प्रश्न –2

1) देखिए उपभाग 7.4

2) स्वयं उत्तर लिखिए।

बोध प्रश्न–3

1) देखिए उपभाग 7.6

2) और 3. प्रश्न संख्या के उत्तर इकाई के अध्ययन के पश्चात् अपने विवेक से लिखिए।

बोध प्रश्न–4

1) और 2. के उत्तर इकाई के अध्ययन के पश्चात् अपने विवेक से लिखिए।

अभ्यास में दिए गए प्रश्नों के उत्तर भी स्वयं लिखिए।